'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ५९ } वाराणसी, शनिवार, ४ जुलाई, १९५९ { पच्चीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

कटोदड़ा (सूरत) २८-९-'५८

तीन कर्तव्य : पक्षभेद-निरास, ग्रामसंकल्प, स्वामित्व-विसर्जन

ग्राम-पंचायतें भारत की एक खासियत कही जायँगी। पुराने जमाने में यहाँ राज्यव्यवस्था का शास्त्र, समाज-शास्त्र आदि सभी कुछ बन गया था, जब कि यूरोप, इंग्लैण्ड आदि देशों में कुछ भी उल्लेख योग्य जागृति नहीं हुई थी।

ग्राम-पंचायतों का मूल इतिहास

उन्हीं दिनों हमारे देश ने मानवता का एक शास्त्र बनाया था। अवश्य ही वह पूर्ण नहीं था, उसमें अनेक हेर-फेर अपेक्षित थे और उन्हें हमारे पूर्वज कर भी पाये। उन दिनों बाहर से अनेक कौमें आयीं और यहाँ आ बसीं। अपनी व्यवस्था के अनुसार उन्हें यह जरूरत महसूस हुई कि ये विभिन्न कौमें आपस में 'सह-जीवन' बितायें। जिस प्रकार आज विभिन्न राष्ट्र मौखिक ही सही, यह मानने लगे हैं कि विश्व-समस्या के हल के लिए हर राष्ट्र अपने-अपने विचारों के अनुसार अपनी-अपनी राज्य-व्यवस्था, समाज-व्यवस्था चलाये, उसी प्रकार पुराने जमाने में भी यहाँ सहजीवन की बात रखी गयी थी। अनेक धर्मों और जातियों के आने पर आरंभ में कुछ कशमकश अवश्य हुई। एक-दूसरे के रीति-रिवाज एक दूसरे के रीति-रिवाजों से टकराने लगे। किन्तु शीघ्र ही उन लोगों ने जातियों के बाड़े बनाये और यह तय कर दिया कि हर जाति में हर जातिवाले अपने-अपने रीति-रिवाज के अनुसार रहें, उसमें कोई किसीको बाधा न डाले। जातियों के ये बाड़े आज संकुचित मालूम पड़ते हैं, लेकिन उस जमाने में ये एक सदुद्देश्य ही लेकर बने थे। सभी परस्परविरोधी माने जानेवालों को एक देश में रखने की हिन्दुस्तान की यह कोशिश थी। सभी कौमें सबको न्याय देने तथा सबके रक्षण और शिक्षण करने की व्यवस्था करें—इस विचार से ये पंचायतें बनीं। उन दिनों हिन्दुस्तान में पाँच जातियाँ प्रचलित थीं : १. ब्राह्मण, २. क्षत्रिय, ३. वैश्य, ४. शूद्र; ये चार वर्ण और फिर बाहर से आयी हुई एक ५ वीं जाति। इस तरह पांच विभाग बनाये गये और उनके एक-एक प्रतिनिधि लेकर सभा बनायी जाने लगी। यही ग्राम-पंचायत है। ये ग्राम-पंचायतें एकमति से, सर्वसम्मति से जो निर्णय देतीं, उन्हें सभीको मान्य करना पड़ता था। इसे ही विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था कहा जाता है और सर्वप्रथम इसे भारत ने ही विश्व के सामने प्रस्तुत किया।

आज जातियों के बाड़े निरर्थक

यह है हमारी ग्राम-पंचायतों का मूल इतिहास। आज जातियों के इन छोटे-छोटे बाड़ों की कोई जरूरत नहीं, इसलिए इन्हें जल्दी से जल्दी मिटा देना चाहिए। इन्हें अनावश्यक चीज मानकर सभी-को एकमत हो जाना चाहिए। ग्राम-पंचायतों के आरंभ के समय इन बाड़ों का उपयोग होने पर भी आज वे उसी तरह निरर्थक और निरोधक हैं, जिस तरह कि पेड़-पौधे बड़े होने के लिए लगायी हुई बाड़ उनके बड़े हो जाने पर निरर्थक और निरोधक हो जाती है। उसे तोड़ ही देना पड़ता है। विज्ञान के इस युग में जातियों के ये खयालात टिक ही नहीं सकते, उनका समूल नाश हो जायगा। इसलिए अब जाति-व्यवस्था तोड़ देनी चाहिए।

पाँच बोले, वही सच्चा परमेश्वर

आश्चर्य है कि ग्राम-पंचायत का यह गंभीर विचार, जो पुराने लोगों को सूझ पड़ा, आज हमें क्यों नहीं सूझता? वे पंचायतें अपने फैसले सर्वानुमति से देती थीं। हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं में कहा जाता है—"पाँच बोले परमेश्वर।" पाँच लोग एकमति से जो बात कहें, उसे परमेश्वर की बात मानकर सभीको उसके अनुसार काम करना चाहिए। किन्तु आज हम बाहर से जो राजतंत्र, राज्यशास्त्र लाये हैं, उसके फलस्वरूप 'तीन बोले परमेश्वर' का कानून मान लिया गया है। ३ के विरुद्ध २ हों तो प्रस्ताव पास! इसलिए 'तीन बोले परमेश्वर' माना गया है। कई बार 'चार बोले परमेश्वर' भी होता है। ३ वाले की अपेक्षा ४ वाला परमेश्वर अपेक्षाकृत अच्छा कहा जा सकता है। लेकिन ये दोनों परमेश्वर सच्चे परमेश्वर नहीं, क्योंकि ये झगड़ा पैदा कराते हैं। जब पाँचों मिलकर एकमत से फैसला देते हैं, तभी जनता में विश्वास पैदा होता है और सारी जनता श्रद्धापूर्वक उसे अमल में लाती है। तब किसी भी प्रकार की झगड़ा-झंझट नहीं होती। लोकतन्त्र या बहुमत के

राज्य में कम से कम गाँवों से तो यह न्यूनता अवश्य दूर करनी चाहिए। ग्राम-पंचायत में सभी एकमत से फैसला दें।

पूछा जा सकता है कि यह कैसे किया जाय? अगर कोई एक अड़ियल-टट्टू हो और बात कबूल ही न करे तो क्या किया जाय? किन्तु जब सारे गाँवों पर अपने कारोबार चलाने की जिम्मेवारी हो तो ऐसे सवाल ही पैदा न होंगे। आज गाँवों पर सारी जवाबदारी नहीं है। सारी सत्ता केन्द्र में ही है। इसीलिए गाँव को उसमें कोई रुचि नहीं है। अतः गाँव का राज्य गाँववाले ही चलायें। यदि यह चाहते हों तो सभी समझदार एकमत से काम करें। यही समझाने के लिए मेरा यह सारा यत्न चल रहा है। सभी समझ लें कि सर्वोदय में 'तीन बोले परमेश्वर' या 'चार बोले परमेश्वर' चल नहीं सकता। वहाँ तो 'पाँच बोले परमेश्वर' ही चल सकता है।

आज की पंचायतें 'पंचाइत' क्यों?

आज सभी ग्राम-पंचायतें पंचाइत (परेशानी) बन गयी हैं। इसका कारण यही है कि हम लोग गाँव में विषमता रखकर ग्राम-पंचायतें बनाते हैं। फलतः जिनके पास अधिक शिक्षा, अधिक पैसा होता है, अधिक सुविधाएँ, अधिक जमीन उन्हींके हाथ रहती है। वे ही पंचायत के मुखिया बनते हैं और सारी सत्ता उन्हींमें केन्द्रित रहती है। फिर वह सत्ता एक विकेन्द्रित शोषण-यन्त्र ही बन जाती है। ग्रामपंचायत का यह उद्देश्य नहीं होता, पर गाँव में विषमता के रहते ऐसा होना अनिवार्य है। आज पंचायत का चुनाव बहुमत से होता है और बहुमत से ही वह फैसला देती है। अतः ये काम सर्वानुमति से होने चाहिए। पंचायतों में यह पहला परिवर्तन जरूरी है।

ग्राम-संकल्प किया जाय

दूसरा परिवर्तन जो मैं करना चाहता हूँ, वह ग्रामदान का वातावरण गाँवों में पैदा करना है। गाँववाले संकल्प करें कि गाँव के सभी लोगों की चिन्ता के विषय गाँववाले ही देख लें। मान लीजिये कि सारा गाँव ही संयुक्त परिवार है और ग्रामस्वराज्य की योजना गाँव के लिए ही करनी है। उस स्थिति में सर्वानुमति की पद्धति से जब ग्राम-पंचायतें बनेंगी तो वे क्लेशकारक नहीं, क्लेश मिटानेवाली ही सिद्ध होंगी। ध्यान देने की बात है। जो काम पहले करना हो, वह पहले ही किया जाय और जो बाद में करना हो, वह बाद में किया जाय। पहला काम बाद में और बाद का काम पहले करने से उसका असर अच्छा नहीं होता। इसलिए यथाक्रम काम होना चाहिए।

सारे गाँव के लोगों को एक होकर यह संकल्प करना चाहिए कि 'हम सब एक हैं। सभी मिलकर सबका हित देखेंगे। हममें से किसीमें भी हित-विरोध नहीं है।' इसके प्रतीकस्वरूप में गाँव के भूमिहीनों को भूमि देनी चाहिए। जिस तरह हवा, पानी मालकियत की चीज नहीं, उसी तरह जमीन भी मालकियत की चीज नहीं है। अतः जमीन भी सारे गाँव की बना लेनी चाहिए। वहाँकी व्यवस्था सारा गाँव मिलकर जैसी करना चाहे, करे और उसी आधार पर ग्राम-पंचायतें बनाये। यदि ऐसा हो तो बहुत कुछ अच्छा हो जाय और विकेन्द्रित राज्य-व्यवस्था का उद्देश्य सफल हो। नहीं तो आज की स्थिति में गाँव में झगड़ा-फसाद पैदा होता है, जातिभेद टूटने की ही तैयारी में था तो उसके बदले यह नया जाति-भेद खड़ा हो रहा है। हमें पुराना जाति-भेद मिटाना है, उसके बदले उसमें यह नयी भर्ती करें तो परिणाम बड़ा ही दुःखद होगा। उसमें एक और भी विषमता भर जायगी। आज कितनों की स्थिति अच्छी होती है तो कितनों की खराब। इसी कारण कई विशिष्ट राजनीतिक दल चुनाव के निमित्त गाँव-गाँव में घुस जाते हैं। आप एक दलवाले को वोट दें तो दूसरा नाराज होता है और दूसरे को दें तो पहला। इस तरह गाँव में कायम के लिए ही शत्रुत्व जम जाता है। गाँव में उत्पन्न इस शत्रुत्व को वहाँसे मिटाना कठिन हो जाता है। कारण, वह एक छोटी इकाई है और उसमें बहुत से लोग बहुतों से परिचित रहते हैं। वहाँ रोज ही यह दिखाया जा सकता है कि यही अमुक व्यक्ति है, जिसने उसे वोट दिया है। यह उसी पक्ष का आदमी है। जैसे किसी पेड़ को रोज पानी दिया जाय, उसी तरह गाँव में शत्रुत्व को बल मिलता है। शहर में उतना क्लेश पैदा नहीं हो सकता, जितना कि गाँव में होता है। उससे पैसा तो क्या, दवा से भी मुँहताज होना पड़ता है। अतः यह पक्ष-भेद भले ही भारतीय राज्य-व्यवस्था में मान्य हो, लेकिन ग्रामीण राज्य-व्यवस्था में उसे कदापि मान्य नहीं करना चाहिए।

तीन बातें

पहली बात, ग्राम-व्यवस्था में पक्ष-भेद मान्य न किये जायँ। दूसरी बात, सभी लोग आज की विषम परिस्थिति की समाप्ति का संकल्प करें। सभी चीजें गाँव-गाँव में पैदा की जायँ। जमीन जैसी वस्तु गाँव की होनी चाहिए। सारा गाँव एक संयुक्त परिवार है, यह गाँववाले निश्चय करें। तीसरी बात, जो चुनाव हो, वह सर्वानुमति से हो और फैसला भी सर्वानुमति से किया जाय। यदि ये तीनों बातें ध्यान में रखी जायँ तो ग्राम-पंचायतें बहुत ही अच्छा काम कर सकती हैं और उनसे सर्वोदय-विचार के लिए काफी मदद मिल सकती है।

गाँव की योजना गाँववाले ही करें

गांधीजी जिस सर्वोदय की—ग्राम-स्वराज्य की—कल्पना करते थे, अगर हमें उसका स्पष्ट ज्ञान हो जाय तो परिणाम-स्वरूप ग्रामस्वतंत्र इकाई के तौर पर रचा जा सकेगा। अगर ऐसा हो तो सारे भारत को मजबूत किया जा सकता है। नहीं तो सारे भारत का स्वराज्य केन्द्रित हो जायगा। सत्ता केन्द्र में रहेगी और योजना भी केन्द्र में। मान लें कि केन्द्र में रहनेवाले लोग चाहे कितने ही निष्ठावान और राग-द्वेषरहित होंगे। चूँकि ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है, फिर भी मान लें कि सारे गाँवों के लिए दिल्लीवाले योजना करें तो वह सभीके लिए हितकारी ही होगी, इसकी संभावना नहीं। उससे अव्यवस्था ही सम्भव है। इसीलिए मैंने पंढरपुर-सर्वोदय-सम्मेलन में कहा था कि देहात की योजना देहातवाले ही करेंगे, दिल्लीवाले नहीं। तभी बेड़ा पार लगेगा। नहीं तो केन्द्र पर इतना बोझ डाल दिया जायगा तो उसे उठाने में कोई समर्थ नहीं होगा। फलतः उसका दुरुपयोग होगा और प्रजा को तकलीफ उठानी पड़ेगी।

बहुत से लोग कहते हैं कि स्वराज्य तो मिल गया, पर जिस सुख की और आशा की कल्पना की गयी थी, वह नहीं मिला। जिस न्याय की कल्पना थी, वह अभी तक नहीं मिल पाया। यह इसलिए नहीं कि कांग्रेस-दल ही चुना गया है। दूसरे दल के लोगों को चुनकर भेजते तो भी बहुत कुछ ऐसा ही होता। मूलभूत बात यह है कि सारी योजना दिल्ली में ही होती है, गाँव में नहीं। जब गाँव की योजना गाँव में होगी, तभी गाँव संकल्प

कर सकेगा कि हम एक परिवार हैं। जब तक गाँव यह संकल्प नहीं करता, तब तक गाँव की योजना भी कैसे हो सकती है? इसलिए ग्राम-संकल्प का आधार मिलना चाहिए और उसी आधार पर गाँव की योजना गाँव में होनी चाहिए। यह किस तरह हो सकता है तो कहना होगा कि जो सर्वोदय-विचार गांधीजी ने हमें सिखाया है, उसीसे यह हो सकता है।

शान्ति-सेना की आवश्यकता

आप जानते होंगे और अखबार में पढ़ा भी होगा कि गत १ वर्ष से मैं शान्ति-सेना की माँग किया करता हूँ। वह पुलिस की मदद के बिना आन्तरि संरक्षण कर सकेगी। जनता के जीवन में कठिन प्रसंग तो आते ही रहते हैं। फिर इतने बड़े प्रदेश में तो वे आयेंगे ही। अतः ऐसे प्रसंगों में तो हम लोग शान्ति से सब कुछ सम्हाल लें और हमारे बीच कोई भी अशान्ति की शक्ति दाखिल न हो जाय, नहीं तो सर्वोदय-विचार खतरे में पड़ जायगा। इसीलिए शान्ति-सेना आवश्यक है।

गुजरात के लिए यह स्वाभाविक बात

गुजरात में आने के बाद तो मैंने यही विचार किया कि यहाँ एक मजबूत शान्ति-सेना की स्थापना होनी चाहिए। भारत को और विश्व को यह आशा रखने का अधिकार है कि गुजरात सारी दुनिया को अहिंसा का दर्शन कराये। मुझे संतोष है कि यह विचार यहाँके युवक और वृद्ध मान्य करते हैं। यह विचार यहाँ सहज ही मान्य हो सकता है, क्योंकि गुजरात के लिए यह स्वाभाविक ही है। गुजरात में जो अहिंसा के प्रयोग हुए, उनके करते गुजराती लोगों में दो शक्तियों का मिश्रण, संग्रह हो गया है। एक तो धर्मवृत्ति या वैष्णव-भक्ति, जिसमें जैनियों का भी समावेश हो जाता है, अर्थात् धर्म-विचार या भक्ति-विचार। दूसरी शक्ति है व्यवहार-कुशलता। जहाँ दूसरे लोग बिना विचारे बल देते हैं, वहीं गुजरात के लोग जहाँ तक बन सके, बल के बदले 'कल' का ही उपयोग करते हैं और कुशलता से काम होने की आशा रखते हैं। याने ऑपरेशन का विचार रखते हैं। जैसे डाक्टर नाजुक हाथों से सावधानी से प्रेम और करुणापूर्वक ऑपरेशन करता है, उसी तरह ये लोग कोऑपरेशन करना चाहते हैं। सभी इकट्ठा होकर कुशलता और प्रेम के साथ समझा-बुझाकर समाज की समस्याओं का हल करना चाहते हैं। गीता में जो कहा है—"योगः कर्मसु कौशलम्", वह इस गुजरात में दीख पड़ता है। साथ ही उनमें वैष्णवपन, भक्तपन भी है। इस तरह यहाँ कर्म-कुशलता और भक्ति-भावना दोनों इकट्ठे हुए हैं। अतः यहाँ स्वाभाविक ही शान्ति-सेनास्थापन की अपेक्षा की जा सकती है। समाज के कामों में जहाँ-जहाँ कठिनाइयाँ आयें, वहाँ-वहाँ शान्ति से ही उनका हल निकाल सकें—ऐसा निश्चय गुजरात की प्रजा करे। फिर गुजरात की जनता में चाहे जितने दल हों। इतने बड़े देश में भिन्न-भिन्न विचार-सरणी के लोग रहेंगे ही। क्योंकि यहाँ के प्रश्न भी बड़े-बड़े हुआ करते हैं। अतः पक्ष भले ही रहें, पर वे मिल-जुलकर विचार-विनिमय करें, जिससे विचारशुद्धि हो जाय। वे लोग जो भी आन्दोलन करें, शान्ति के मार्ग से ही करें। फिर भी गुण्डे लोग आतंक मचाकर अवांछनीय कार्य कर डालें तो शान्ति-सेना बीच-बचाव कर उसे रोके। भारत और सारी दुनिया गुजरात से यही आशा रखती है। मुझे कहने में खुशी हो रही है कि जब से यहाँ आया हूँ, उसके ५-७ दिनों के बीच ही १५-२० शान्ति-सैनिक मिले हैं। यह बहुत आशाजनक बात है। शान्तिसैनिक साधारण समय में सेवा का काम करेगा और विशेष प्रसंग में सिर भी देगा। इस तरह इसका दुहरा काम है। साधारण समय में प्रेमयुक्त, करुणामय सेवा और विशेष समय में त्यागयुक्त, बलिदानयुक्त सेवा। दोनों करुणामूलक सेवाएँ हुईं। जिसकी इस तरह की तैयारी हो, वही शान्ति-सैनिक के रूप में आगे आयेगा।

पुरानों के भी नाम चाहिए

कल जुगतराम भाई ने एक बहुत ही सुन्दर वाक्य कहा कि 'इस सेना में पुराने योगी लोग तो हैं ही, उनके नाम की जरूरत ही क्या है? जो नये जवान हैं, उनके नाम आने चाहिए।' उनके इस वचन से मुझे थोड़ा बल मिला। अब पुराने साथियों के लिए मुझे कोई संकोच रखने की जरूरत नहीं। अब मेरे लिए उन्हें यह चिट्ठी भर लिख देना बाकी रहा कि 'आप सेना में हैं, यह मान लेता हूँ। आप शान्ति-सेना की सभा में आइये।' मेरा काम बन गया। नहीं तो मुझे संकोच होता था कि सेना में सभी नये आयें और पुराने न आयें तो यह सेना अननुभवी ही रह जायगी। अनुभवहीन सेना के लोगों के साथ अनुभवी लोग होने ही चाहिए। बिना अनुभव के शान्ति स्थापित हो कैसे की जा सकती है?

कमाण्डर का हुक्म अनिवार्य

इसमें एक बात रह जाती है। शान्ति-सेना का काम यों तो जगह-जगह होगा, किन्तु कहीं एकदम बहुत से शान्ति-सैनिकों की जरूरत आ पड़े तो उन बाहरी सैनिकों को तार द्वारा कमाण्डरों का हुक्म जायगा। इस पर जब वे घर का या सार्वजनिक संस्थाओं का काम छोड़कर एकदम वहाँ पहुँच जायँ, तभी अहिंसा का बल प्रकट हो सकता है। नहीं तो उसे शह खानी पड़ेगी। भले ही हमारी लिस्ट में पुराने योगियों के नाम लिखे हों, किन्तु यदि वे स्वयं खड़े होकर अपने नाम नहीं देते तो कमाण्डर के हुक्म पर यह लिख सकते हैं कि अभी हम अमुक-अमुक काम में फँसे हैं। अमुक-अमुक दिनों बाद आयेंगे या यह भी लिख सकते हैं कि हम नहीं आयेंगे। मुझे यह बतलाते हुए आनन्द होता है कि शान्ति-सेना की बात शुरू होने पर सबसे पहले जे० पी० (जयप्रकाश नारायण) ने अपना नाम दिया और दूसरा नाम रविशंकर महाराज ने। इसलिए मुझे नये भक्तों के साथ पुराने योगियों के भी नाम चाहिए। उनके अनुभवों से नये भक्त भी अनुभवी बनेंगे।

यह हुक्म की भाषा बेतुकी नहीं

यहाँ मैंने जो 'हुक्म' शब्द कहा, उससे तनिक भी हल्का शब्द मैं इस्तेमाल ही नहीं कर सकता। नानक ने गाया है: 'हुक्म रजाई चल्लणा। नानक लिखियो नाव।' नानक ने हुक्म शब्द का काफी प्रयोग किया है। भगवान के हुक्म के अधीन हों, तभी हम भक्त कहे जा सकते हैं। अगर सिपाही बनना हो तो भगवान् के हुक्म के अनुसार ही चलना होगा। ऐसी भाषा नानक ने भक्तिमार्ग में उपयोग में लायी है। विचार का ही शासन माननेवाला, किसीपर किसीकी आज्ञा चलने का कट्टर विरोधी और विचार-स्वातंत्र्य का हिमायती मैं जब हुक्म की बात करता हूँ तो मेरे प्यारे बच्चे कहने लगते हैं कि 'बाबा, आप तो डिक्टेटरशिप (अधिनायकवाद) पर उतर गये! अगर आप ही कमाण्डर या डिक्टेटर हो जायँ तो फिर दुनिया

को कौन बचायेगा ?' मैंने उन्हें समझाया : भाइयो ! सेनापति का कमाण्ड – यह तो एक भाषा है। इसे गुरु की आज्ञा ही समझकर क्यों न उठा लें ? इसके बिना यह काम हो नहीं सकता। नहीं तो रविशंकर महाराज भी शान्ति-सैनिक हैं। इन्हें मैं क्या आज्ञा दूँगा ?

शान्ति-सहायक और उनकी मर्यादा

अभी-अभी एक नाम 'शान्ति-सहायक' के तौर पर घोषित हुआ है। आखिर इस शान्ति-सहायक की क्या मर्यादाएँ हैं ? वह पाँच हजार बस्ती के क्षेत्र में स्वयं शान्ति-सैनिक का काम करेगा, पर दूसरे क्षेत्र में बिना किसी विशेष प्रसंग के नहीं जायगा। यह शान्ति-सहायक का विचार मुझे बंबई की बहनों ने सुझाया। कई बहनों ने कहा कि हम बाल-बच्चेवाली हैं। अपने क्षेत्र में, नगर में जहाँ कहीं जाना पड़े, सिर भी देने के लिए तैयार हैं। साधारण प्रसंग में सेवा भी कर सकती हैं। लेकिन अगर बँगलोर में दंगा हो जाय तो वहाँ कैसे जा सकती हैं ? तभी मुझे 'शान्ति-सहायक' शब्द सूझ पड़ा। किन्तु शान्ति-सहायक का खाता खुल जाने से शान्ति-सैनिकों का खाता बन्द हो गया, ऐसी बात नहीं। शान्ति-सैनिकों का आँकड़ा एक है और शान्ति-सहायक शून्य। एक के साथ शून्य मिलकर दस हो जाते हैं। इस तरह उसका उपयोग दस करने में है। लेकिन सिर्फ शून्य ही रहा तो उसका कुछ भी उपयोग नहीं है। मान लीजिये, एक शान्ति-सहायक है और यहाँ शान्ति ही है। लेकिन अहमदाबाद में अशान्ति हो जाय, तो वहाँ आदमी की कमी पड़ती है। वहाँ शान्ति-सहायक कहाँ से जा सकते हैं ? अगर वैसी स्थिति में बाहर से मदद न भेजी जाय तो अहिंसा दुबली पड़ जायगी। आज सारे देश में अशान्ति का वातावरण है। कहाँ, कब हिंसा फूट निकलेगी, कहा नहीं जा सकता। इसलिए शान्ति-सैनिकों की भी काफी मात्रा में जरूरत है। इस तरह योजना करें तो यह काम हो सकता है।

सभी लोग सन्देश प्रचारित करें

यह सारा विचार गाँव-गाँव पहुँचाने का काम मुझे करना पड़ रहा है। मान लें कि साढ़े सात साल में एक गाँव के मेरे व्याख्यान में १० गाँव के लोग जुटते हों तो साल भर में चार-पाँच हजार गाँव के लोग ही उसे सुन सकते हैं। इस तरह तो मेरा सन्देश हिन्दुस्तान के सारे गाँवों में पहुँचने में काफी साल लग जायँगे। इसलिए दूसरों के द्वारा भी सन्देश पहुँचना चाहिए। अतएव शान्तिसेना साधारण समय में सेवा करनेवाली संस्था रहेगी और घर-घर जाकर 'भूमिपुत्र' और सर्वोदय-वाङ्मय पहुँचाकर यह सन्देश सुनायेगी। गुजरात और सौराष्ट्र के गाँवों में यह योजना हो जाय तो काम जल्दी हो जायगा।

यह उतावली उचित ही

शान्तिसेना का जप गत एक साल से चल रहा है। इस बीच सारे हिन्दुस्तान में २५० शान्ति-सैनिक बने हैं और मुझे चाहिए ७५ हजार। इस तरह तो यह ३ सौ वर्षों का कार्यक्रम हो जाता है। विज्ञान-युग में यह अव्यावहारिक कार्यक्रम ही माना जायगा। फिर तो विनोबा भी हवा में बातें करनेवाला माना जायगा। इस तरह तो सर्वोदय की प्रतिष्ठा ही नहीं हो सकती। इसका अर्थ यही होगा कि सर्वोदय 'बकवाद' में प्रवीण है। इस तरह स्पष्ट है कि हमारी गति बड़ी ही धीमी है। कहा जा सकता है कि इस बारे में मुझे उतावली नहीं होनी चाहिए, अहिंसा में उतावली को स्थान नहीं। फिर भी मैं चाहता हूँ कि गुजरात में यह काम चार महीनों में हो जाना चाहिए। यह अहिंसा में नहीं, विज्ञान में उतावली है। हमें अहिंसा और विज्ञान दोनों का योग कराना है, अतएव अन्दर शान्ति और स्थिरता रखकर बाहर से उतावली करनी ही पड़ेगी। तभी हमारा काम चल सकेगा। विज्ञान-युग हमें अधिक समय नहीं दे सकता।

यह शान्ति-सैनिकों का मौसम

गांधीजी ने भी शान्ति-सैनिकों की कोशिश की, पर उन्हें वे नहीं मिले। इससे निराश होने की कोई बात नहीं है। वह उनका मौसम नहीं था, इसीलिए नहीं मिले। किन्तु आज शान्तिसैनिकों का मौसम है। जब आम का मौसम आता है तो सारे भारत में १०-१५ दिनों में वे पक जाते हैं। इसी तरह आज सारे भारत में शान्ति-सैनिकों का मौसम है। अभी गुजरात में शान्ति-सेना का काम होता रहे, बिहार में बाबा जब आयेंगे, तब होगा—ऐसा अगर सोचें तो भारत में शान्ति का काम कभी नहीं हो सकता। गुजरात का काम मेरी गुजरात-यात्रा में ही हो और इसी बीच भारत में भी सर्वत्र वह होना चाहिए। मुझे आशा है कि भारत और गुजरात में गांधीजी ने जो बीज बोया है, वह अवश्य उगेगा।

◆◆◆

पुरुषार्थ की यह कसक

अकबर बादशाह की एक प्रसिद्ध कहनी है। उनके एक ज्ञानी गुरु थे। अच्छी तालीम देते थे। जब अकबर की उम्र १३ साल की हो गयी तो उसके मन में आया कि मैं कब तक तालीम लेता रहूँगा ? १३ साल का हो गया हूँ, फिर भी सिंहासन खाली ही है। अकबर का बाप बचपन में मर गया था। राजा के बदले गुरु राज्य का कारोबार देखते थे और अकबर को तालीम देकर उसे राजा बनानेवाले थे। लेकिन अकबर के मन में यह आने लगा कि मैं कब तक तालीम लूँ ? एक दिन वह उठा और दरबार-हाल की ओर चल पड़ा। सिपाही दरवाजे पर खड़े थे। उन्होंने दरवाजा खोल दिया और राह दी। वह सीधा गया और राज-सिंहासन पर बैठ गया। वहाँ से नौकरों को हुक्म किया : "अब मैं राजा बन गया हूँ, मेरा हुक्म मानना।" नौकरों ने पूछा: "क्या आज्ञा है ?" अकबर ने कहा : "उस गुरु को जेल में डाल दो।" नौकरों ने हुक्म के अनुसार काम किया और गुरुजी को जेल में डाल दिया। गुरुजी बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति थे, अकबर के मन में भी उनके प्रति आदर था। परन्तु अकबर ने १२-१३ दिन अच्छा काम चलाया। फिर एक दिन गुरु से मिलने जेल में गया और गुरु से कहा : "आप हमें क्षमा कीजिये, हमसे रहा नहीं गया कि कब तक पुरुषार्थ के बिना रहें ? आज से आप मुक्त हैं। आपसे हम सलाह-मशविरा करते रहेंगे। मैं आपका प्यार और मदद चाहता हूँ।" गुरु ने कहा : "तूने जो किया, वह ठीक ही किया। लेकिन अब मुझे यात्रा में जाने की इच्छा हो रही है। मुझे जाने दे।" इस तरह गुरु यात्रा में गया और अकबर ने उसकी यात्रा का खुद अच्छा इन्तजाम किया। १३ साल के अकबर के दिल में यह कसक थी कि पुरुषार्थ के बिना वह अपना जीवन कैसे बिताये ?

प्रार्थना-प्रवचन

जम्मू (कश्मीर) ११-६-'५९

शरीर को कपड़ा मानें : शान्ति-सेना में भरती हों

[जम्मू में विनोबाजी का तीन दिन मुकाम रहा। पहले दो दिन की सार्वजनिक सभाओं में नागरिकों के लिए विनोबाजी बोले। तीसरे दिन की सभा खास तौर पर विद्यार्थियों के लिए रखी गयी थी। उस दिन बड़ी भीड़ थी। छोटे बच्चों की तादाद ज्यादा थी। नागरिक पुरुष एक बाजू बैठे थे। बच्चों को, विद्यार्थियों को विनोबाजी के सामने बैठाया गया था। विनोबाजी का मंच एक ऊँची जगह पर था। नीचे तमाम विद्यार्थी और नागरिक बैठ थे। जम्मू की बेहद गरमी के कारण तीनों दिनों की सभाएँ शाम को ७ बजे रखी गयी थीं। आजतक इतनी देरी से सभा कभी नहीं रखी गयी थी।

विनोबाजी सभास्थल पर जब आये, तब कुछ विद्यार्थी खंजरी, तबला आदि वाद्य लेकर बड़े जोर से रामधुन कर रहे थे। विनोबाजी ने उनका साथ दिया। स्टेज पर खड़े होकर वे भी ताली बजा-बजा कर ताल देते गये। इससे विद्यार्थियों की खुशी बहुत बढ़ गयी। वे और जोर से कीर्तन करने लगे। ताली बजाते-बजाते विनोबाजी भजन में इतने तल्लीन हो गये कि वे मंच पर धीरे-धीरे नाचने लगे। लड़के-लड़कियों ने यह देखा तो वे फुले नहीं समाये। बच्चों के साथ विनोबाजी एकरूप हो गये। फिर विनोबाजी ने कहा—"देखो बच्चो, आज हमारा भाषण खासकर विद्यार्थियों के लिए होनेवाला है। खुशी की बात है कि सामने विद्यार्थी बैठे हैं। लेकिन गरमी बहुत है। इस वास्ते कुरता पहन रखने की कोई जरूरत नहीं है...." यह सुनते ही सभा में थोड़ी हलचल शुरू हुई और दो चार विद्यार्थियों ने अपने कुर्ते निकाल दिये। यह देखकर विनोबाजी कहने लगे—"शाबास, शाबास! उतार दो, निकाल दो! कुर्ते निकालने के लिए भी हिम्मत चाहिए। हिम्मत करो और खोल दो कपड़ा।" धीरे-धीरे आधे से अधिक विद्यार्थी कुर्ते उतारने लगे। विनोबाजी तालियाँ बजाने लगे। सारी सभा हँसने लगी, स्वयं विनोबाजी हँसने लगे। सभा तालियाँ बजाने लगी। कुछ लड़के अपने कुर्ते हवा में उड़ाने लगे, कुछ लड़के अपने कुर्ते निकालकर विनोबाजी को दिखाने लगे। विनोबाजी ने भी अपना ऊपर का कपड़ा उतार दिया और विद्यार्थियों को दिखाकर हाथ में लेकर हिलाने लगे। दस-पन्द्रह मिनट तक आनन्द का यह समा बँधा रहा। इस तरह बच्चों को खूब प्रसन्न करके फिर विनोबाजी ने अपना भाषण आरम्भ किया। —सं०]

मेरे प्यारे लड़को!

अपने हिन्दुस्तान में कदीम जमाने से आज तक अपनी एक सभ्यता चली आयी है। अपने देश में अपने देश की एक सभ्यता है। उसमें इस शरीर को ही चोला समझते हैं। आज-कल हम इसे 'शरीर' कहते हैं और (अपना कपड़ा दिखाकर) इसे 'कपड़ा' कहते हैं। लेकिन अपने देश के पुराने लोग यह समझते थे कि यह शरीर ही कपड़ा है, यह देह चोला है। हमारे ऋषियों ने यह समझा दिया है कि यह शरीर ही कपड़ा है और हम ढँके हैं। हम अन्दर रहते हैं और यह ऊपर का चोला है—कपड़ा है। हम शरीर छोड़कर चले जायँगे तो यह कपड़ा ऐसा ही पड़ा रहेगा। उसे कौन उठायेगा, क्योंकि वह खुद तो उठेगा नहीं। हम इस शरीर में रहते हैं, हम जायँगे तो यह शरीर यहीं पड़ा रहेगा, उसकी लाश बनेगी। दूसरे लोग उसे उठाकर ले जायँगे और जलायेंगे या दफनायेंगे। तो, यह ऊपर का कपड़ा है। हम इसके अन्दर छिपे हैं। प्राण निकल जाने के बाद दूसरे लोग इस शरीर को उठाते हैं।

शरीर खुला रखना जरूरी

'जपुजी' में नानक ने कहा है—"करमी आवे कपड़ा, नदरी मोख दुवारी" याने हमारे कर्म से कपड़ा न मिलता है और भगवान की कृपा होती है तो मोक्ष मिलता है। शरीर ही हमारा कपड़ा है। जरूरत होती है, तब इसे पहन लेते हैं और जरूरत नहीं होती तो पटक देते हैं। सर्दी में पहन लेते हैं और गर्मी में उतार देते हैं। लेकिन इन दिनों एक रिवाज चला है कि गरमी में भी लोग कपड़े पहनते हैं। यह सभ्यता नहीं, रिवाज है। कारण, इस शरीर के लिए लज्जा है, घृणा है, नफरत है। भगवान ने जो शरीर हमें दिया है, उसकी शरम नहीं होनी चाहिए। हमारे देश की सभ्यता यह है कि मनुष्यों को खुले बदन रहना चाहिए। हमारे देश के ऋषि खुले बदन सूर्य की किरणों में घूमते थे। शरीर को सूर्यनारायण की किरणें न मिलेंगी तो शरीर फीका, कमजोर पड़ेगा और जिन्दगी भी घटेगी। गरमी में खेत की मिट्टी बहुत तपती है। उस पर सूरज की रोशनी पड़ती है तो वह गरम हो जाती है। अगर सूर्यनारायण गरमी न पहुँचायें और मिट्टी गरम न हो तो बारिश होने पर बीज बोने से भी फसल नहीं उगेगी। फसल इसीलिए उगती है कि सूर्य की किरणें मिट्टी को गरम करती हैं। इससे उस मिट्टी में जान दाखिल हो जाती है। मिट्टी जानदार हो जाती है। फिर बारिश होती है तो फसल उगती है। ऐसे ही हमारा यह बदन मिट्टी है। तपने पर इसमें भी जान आ जाती है। इसलिए दिन में थोड़ी देर, घण्टा डेढ़ घण्टा बिलकुल खुले बदन रहना चाहिए और सूर्य की किरणें शरीर पर पड़नी चाहिए। ऐसा हम नहीं करेंगे तो हमारी जिन्दगी घटेगी और हमार शरीर फीका पड़ जायगा। बुद्धि भी घटेगी, इसलिए शरम के मारे हमेशा कपड़ा पहने रहना अच्छा नहीं है। थोड़ी देर शरीर खुला रहना चाहिए। आज यह बात विज्ञान भी सिखा रहा है कि सूरज की किरणें जब शरीर पर पड़ती हैं, तब शरीर में प्राण-संचार होता है।

इन दिनों लोग बच्चों को नंगे नहीं रहने देते। आपको यह सुनकर शायद ताज्जुब होगा कि हम देहात में रहते थे और ९ साल तक बिलकुल नंगे घूमते थे। फिर उपनयन हुआ और हमने लँगोटी पहनना शुरू किया। बाद में हम शहर में पढ़ने गये। पिताजी के कहने पर स्कूल में हम धोती पहनकर जाते थे। लेकिन घर में आने के बाद धोती पटक देते और लँगोटी लगाकर घूमते थे। किन्तु इन दिनों बच्चों को बचपन से ही मुर्दे की तरह ढाँक देते हैं। परिणामस्वरूप बच्चे कमजोर होते हैं। उनकी 'रिकेट्स फ्रेम' होती है। उनकी हड्डी मजबूत, विकसित नहीं होती। उसमें ताकत नहीं रहती। इसलिए बच्चों को थोड़ी देर खुले बदन सूर्य की किरणों में रखना चाहिए। इसमें शर्मिन्दा होने की बात नहीं है। शर्मिन्दा होने की बात है—झूठ बोलना, गलत काम करना या हाथों से किसीको मारना-पीटना। यही बात समझाने के लिए हमने आरम्भ में नाटक कर लिया है।

संस्कृत भाषा से प्रेम

यहाँ के बच्चे-बच्चियों में काफी उत्साह है। आज सुबह गर्ल्स् हाईस्कूल की लड़कियाँ हमसे मिलने आयी थीं। मैंने

दर्याफ्त किया तो पता चला कि वे अंग्रेजी हिंदी, संस्कृत, इतिहास, भूगोल, गणित आदि विषय पढ़ती हैं। हमने उनसे पूछा कि 'इतने सब विषयों में किस विषय में तुम्हें ज्यादा मजा आता है ?' तो बहुत-सी लड़कियों ने कहा—'संस्कृत में।' लड़कों से भी मैं पूछना चाहता हूँ कि संस्कृत में जिन्हें ज्यादा मजा आता हो वे लड़के हाथ ऊपर करें। (आधे से अधिक लड़कों ने हाथ ऊपर उठाये।) जम्मू के लड़के-लड़कियों को संस्कृत के लिए जितना प्यार है, उतना और किसी विषय के लिए नहीं है—यह बहुत ही बड़ी बात है। इससे हमें बड़ी खुशी होती है। मेरे प्यारे बच्चो, तुम खूब संस्कृत सीखो। उपनिषद्, गीता सीखो। इससे तुम्हें आत्मा का ज्ञान मिलेगा। "हम कौन हैं ? इस जिंदगी में क्या करने आये है ?" यह सारी विद्या संस्कृत में है। मुझे खयाल नहीं था कि जम्मू के लड़के-लड़कियों को संस्कृत पसंद होगी। सुनकर मुझे अचरज भी हुआ और बड़ी खुशी भी, क्योंकि संस्कृत में इस देश का सारा ज्ञान भरा पड़ा है। उसपर हमारी बपौती है। जितना कीमती ज्ञान संस्कृत में है, उतना और किसी भाषा में नहीं मिलता। इसलिए सभीको मैं कहना चाहता हूँ कि संस्कृत सीखो और उसमें जो ब्रह्मविद्या है, उसे सीखो।

कश्मीर से शांति-सेना की माँग

जम्मू और कश्मीर में हमें तीन हफ्ते हो गये हैं। यहाँ के लोगों से मैंने शान्ति-सेना की माँग की है। मैंने कहा कि मुझे ऐसे लोग चाहिए जो किसीको मारें-पीटें नहीं, सब पर समान प्यार करें। लड़नेवालों के बीच निडरता से जाकर उनको रोकें और कहें कि 'प्यारे भाइयो, लड़ो मत, झगड़ो मत। लड़ना झगड़ना गलत है। इसमें देश और दुनिया का नुकसान है।' लड़नेवालों के बीच वे लाठी लेकर नहीं जायँगे। वे मार खायेंगे, लेकिन भागेंगे नहीं, पीठ नहीं दिखायेंगे। हिम्मत से लड़ाई रोकेंगे।

नारद मुनि की कहानी आपको मालूम होगी। वाल्मीकि डाकू थे। शिकार कर, जानवरों को मारकर अपना काम चलाते थे। वाल्मीकि ने नारद मुनि पर हमला किया, नारद मुनि शान्त बने रहे। उन्हें न तो गुस्सा आया, न वे भागे। ऐसा अनोखा जानवर वाल्मीकि ने पहले नहीं देखा था। डर से भागनेवाले या गुस्से से हमला करनेवाले दो ही प्रकार उन्होंने अभी तक देखे थे। नारद मुनि शान्ति से वीणा बजाते रहे और गाते रहे—"जय जय राम कृष्ण हरि, जय जय राम कृष्ण हरि।"

यह देखकर वाल्मीकि पिघला और नारद मुनि के चरण छूकर रोने लगा। बोला—"मैं पापी हूँ, मुझे बचाओ।" नारद ने कहा—"उठ खड़ा हो। तेरे पश्चात्ताप से तेरे जनम-जनम के पाप कट गये। तेरा नया जनम हुआ है, ऐसा समझ। तेरे पुराने पाप मुआफ हैं।" वाल्मीकि ने घबराते हुए पूछा—"आपने तो क्षमा की, लेकिन क्या भगवान भी क्षमा करेगा ?" नारद ने कहा—"पुराना वाल्मीकि मर गया, अब तेरा नया जन्म हुआ है।" यह कहकर उसे समझाया कि किसी गुफा में १० हजार साल का पुराना अन्धेरा हो, पर वहाँ लालटेन लेकर जाते ही पुराना अन्धेरा खतम हो जाता है। रामजी का नाम लिया और पुराने पाप का पश्चात्ताप हुआ तो पाप ऐसे ही कट जाते हैं। तब से वाल्मीकि ने लूटने का धन्धा छोड़ दिया और वह रामजी के नाम का जप करने लगा। उसकी बुद्धि में प्रकाश पड़ा और वह महर्षि बन गया। उसने बड़ी आला किताब लिखी। वह महाकवि बना। बाद में तुलसीदासजी ने उसे घर घर पहुँचाया। वाल्मीकि में इतना फर्क इसीलिए हुआ कि उसे नारद ऐसे मिले जो न गुस्सा करते थे, न डरते थे।

इस तरह शान्ति से दंगा-फसाद, लड़ाई-झगड़ा रोकने का काम जो कर सकेगा, वह होगा शान्ति-सैनिक। वह कहेगा कि मैं गाँव की सेवा करूँगा, अशांति न हो—ऐसा वातावरण तैयार करने की कोशिश करूँगा। फिर भी अगर दंगा हुआ तो मैं बीच में पड़ूँगा और शान्ति लाने की कोशिश करूँगा। मार खाऊँगा, पर पीठ नहीं दिखाऊँगा। ऐसी हिम्मत देश में आयेगी तभी जालिमों का जुल्म खतम होगा।

बहनों में भारी उत्साह

आज तक इस प्रदेश में ४०० भाई-बहनों ने शान्तिसेना के लिए अपना नाम दिया है। वे कहते हैं कि गाँव की सेवा हम करते रहेंगे, घर की तो करते ही हैं। उस सेवा के लिए पैसा नहीं माँगेंगे और मौका आने पर डरकर भागेंगे भी नहीं। ऐसी हिम्मत करनेवालों की यह जमात देख और उनमें भी १५० बहनों के नाम देखकर हमारे साथी देखते ही रहे! उन्हें अचरज हुआ कि यह क्या बात है। सभा में बहनें भी उठ-उठकर कह रही हैं—"हमारा नाम लिखिये।" हमारी कृष्णा बहन (सदस्य, लोकसभा) लिखते-लिखते थक जाती थी। ऐसी घटना सारे भारत में नहीं बनी। कृष्णा बहन तो कहने लगी कि "यहाँ तो सैलाब आया है।" आठ साल की यात्रा के बाद हम यहाँ पहुँचे हैं। आज तक दूर से लोग सुनते थे—विनोबा आयेगा। अब उन्हें ऐसा जोश आया है, वे नाम दे रहे हैं। अब सवाल इन लोगों की तालीम का है। उनसे काम भी लेना होगा। सेवा का नक्शा उन्हें दिखाना होगा। ऐसी सेवा करो तो जम्मू में बढ़िया काम बन सकता है।

निर्भयता आवश्यक

मनुष्य इस शरीर को चोला समझेगा तो मौत से डरेगा नहीं। एक राक्षस की कहानी है। उसने एक मनुष्य को गुलाम के तौर पर अपने पास रखा था। राक्षस जो भी खिदमत कराता था, वह मनुष्य करता था। वह काँपते-काँपते, डरते-डरते काम करता था। थककर बैठते ही राक्षस कहता था—अरे, तू करते-करते रुक गया। मैं तुझे खा जाऊँगा। हमेशा उसकी यह धमकी सुनते-सुनते मनुष्य थक गया। आखिर उसने तय किया कि एक दिन मरना ही है तो मैं राक्षस की धमकी क्यों सुनूँ ? इसलिए एक दिन उसने तय किया और कह दिया, "अच्छा, तू मुझे खायेगा तो खा जा !" खत्म ! राक्षस ने जब यह सुना तो वह चुप हो गया। क्योंकि वह यदि उसे खा जाता तो फिर उसे नौकर कहाँ से मिलता ? इसलिए उसने मनुष्य से कहा—"देख, तू थक गया है। कुछ देर आराम कर ले।"

मनुष्य समझ गया कि राक्षस डराता है। मैं डरूँगा तो यह और ज्यादा डरायेगा। मैं डरूँगा तो यह जुल्म करेगा, जुल्म करनेवाला हावी हो जाता है। इसलिए मरने से क्यों डरूँ ? यह शरीर तो कपड़ा है। जरूरत हुई तो पहन लिया, जरूरत न रही तो पटक दिया। कोई मारेगा तो मेरे कपड़े को मारेगा, मेरे जिस्म को मारेगा। कोई पर्वाह नहीं है। यह शरीर एक दिन मरनेवाला है ही।

मरने का डर छोड़े बगैर मनुष्य कोई पुरुषार्थ नहीं कर सकता। उसके बिना इन्सानियत टिक ही नहीं सकती। बेडर,

निडर, निर्भय बनना चाहिए। निडरता सब गुणों में श्रेष्ठ गुण है।

देखो बच्चो, माँ-बाप भी तुम्हें मारें-पीटें तो कहो कि "हम हरगिज नहीं मानेंगे। आप हमें मारेंगे तो हम नहीं सुनेंगे। समझाकर बताइये तो हम मानेंगे।" तुम उन्हें बाबा का नाम बता दो।

यहाँ आये हुए माता-पिताओं को भी मैं समझा रहा हूँ कि आप अगर बच्चों को मारेंगे तो उन्हें डरपोक बनायेंगे। बच्चे डरपोकपन सीखेंगे। बुजदिल बनेंगे। मान लीजिये कि कोई लड़का नियमित रूप से स्कूल नहीं जाता है और मारने से वह वक्त पर स्कूल जाने लगा तो इसमें कमाया नहीं, बल्कि खोया। दो पैसे कमाये, लाख रुपये खोये। निर्भयता की कीमत ज्यादा है, क्योंकि जो शरीर को तंग करेगा, मारेगा, उसे वश होने की बात बच्चा सीखेगा। इसलिए माता-पिताओं को समझने की बात है।

देश के बच्चे हिम्मतवाले, निर्भय, निडर बनने चाहिए। मौके पर जिस्म पटकने की तैयारी रखनी चाहिए। ऐसी हिम्मत होनी चाहिए। साथ-साथ मारनेवाले पर गुस्सा भी नहीं होना चाहिए। इतनी ताकत आ जाय तो शान्ति-सेना बनेगी। ऐसी शान्तिसेना बनेगी तो भारत में दंगा नहीं होगा और भारत की ताकत बढ़ेगी।

दहेज की प्रथा गलत

आज सुबह कुछ लड़कियाँ मिलने आयी थीं। वे कहती थीं कि "आपने भूदान का काम शुरू किया है। यह अच्छा काम है। लेकिन हम पर जुल्म होता है। जम्मू और कश्मीर में दहेज का बुरा रिवाज है। इससे हमें छुड़ाइये।"

यह रिवाज बिलकुल गलत है। क्या लड़कों को बैल की तरह बेचना है? बैलवाला कहता है कि हमने इसकी अच्छी खिलायी-पिलायी की है, अतः इसकी कीमत ३००) है। इसी तरह लड़के का बाप कहता है कि मैंने अपने लड़के को पढ़ाया है, उसमें इतना खर्चा हुआ है। अतः मैं इसे ५ हजार रुपये में बेचूँगा। तो जैसे बैल को बेचते हैं, वैसे ही लड़कों को बेचने की बात है। सोचना चाहिए कि हर घर में बच्चे होते हैं, बच्चियाँ भी होती हैं। बच्चे की शादी में पैसा हाथ में आयेगा, जो बच्ची की शादी में जायेगा।

यह गलत रिवाज बंद होना ही चाहिए।

यह बात इतनी गम्भीर सभा में—जहाँ शान्तिसेना की, शरीर को कपड़ा समझने की और आत्मज्ञान की बात हमने की—कहने की नहीं थी। लेकिन सुबह लड़कियों को वचन दे दिया था, इसलिए कह दी।

◆◆◆

स्वागत प्रवचन

नौशेरा (कश्मीर) २०-६-'५९

सच्ची बहादुरी किसमें?

'नौशेरा' का नाम तो बहुत सुना था। अखबार में आता ही था। यहाँके किस्से सारे देश में फैले हैं—कुछ गलत और कुछ सही भी। जैसे भी हों, वे लोगों में पहुँचे हैं और इस शहर का नाम सबको मालूम हो गया है। एक जमाना था, जब कि इस नौशेरा में बड़े-बड़े आलिम और बड़े-बड़े महापुरुष घूमे। शायद गुरु नानक भी इसी रास्ते से श्रीनगर गये और उनके बाद अकबर बादशाह भी। खैर! यह एक ऐसा मुकाम है, जहाँसे बहुत-से लोगों ने दुनिया को नीति का संदेश दिया है। हम भी आज वहीं आ पहुँचे हैं।

जिन्दगी में अमलकर बोलिये

आप जानते हैं कि हमारी पैदलयात्रा आठ साल से चल रही है। अगर परमेश्वर ने चाहा तो चंद दिनों में हम श्रीनगर पहुँचेंगे। आप देखते हैं, आपने अभी बहुत ऊँची आवाज में अपना 'कौल' सुनाया—"जय जगत्" ताकि वह पाकिस्तान की हद तक पहुँचे। (नौशेरा शहर से हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की सरहद, जिसे Cease Fire Line कहते हैं, दो-ढाई मील पर ही है। विनोबाजी का भाषण शुरू होने के पहले एक भाई ने लोगों से कहा कि 'जय-जगत्' का मंत्र इतनी ऊँची आवाज में बोलें कि वह पाकिस्तान की सीमा तक पहुँचे—सं०।) अगर आपने ठीक समझकर इसका उच्चारण किया तो आपकी यह आवाज सिर्फ पाकिस्तान की हद तक ही नहीं, बल्कि कुल दुनिया में पहुँच सकती है। अगर आप यह सोचकर कि हम जो बोल रहे हैं, उसका अमल अपनी जिंदगी में लायेंगे, बोलेंगे तो यह आवाज सिर्फ पाकिस्तान में ही नहीं, कुल दुनिया में पहुँच जायगी। उसके लिए किसी रेडियो की जरूरत नहीं होगी, ऐसे ही सारी दुनिया में पहुँच जायगी। अगर चीज का अमल जिन्दगी में हो तो उसे फैलाने के लिए कहीं जाना नहीं होगा। लोग यहीं आयेंगे और इसे ले लेंगे। रास्ते में हमने संयुक्त राष्ट्रसंघ की जीप देखी। उसमें एक ही मनुष्य था और वह था—ड्राइवर! गाड़ी खाली थी। ये लोग यहाँ आते हैं, देखते हैं। वे अगर यहाँ 'जय-जगत्' की जिन्दगी देखेंगे तो बाहर जाकर यहाँकी कहानी सुनायेंगे और प्रचार करेंगे। इसलिए हमें यह ध्यान में रखना होगा कि हम जिस शब्द का उच्चारण करते हैं, उसका अमल हमें जिन्दगी में करना है।

आज एक पुलिस-अधिकारी 'गीता-प्रवचन' पर हस्ताक्षर लेने आये थे। पूछने लगे—'जय-जगत्' की मानी क्या है? मैंने उन्हें इसका मानी समझाया। फिर उन्होंने पूछा कि इसका उर्दू तरजुमा क्या हो सकता है? मैंने समझाया कि ऐसे शब्दों का तरजुमा नहीं हो सकता। ऐसे शब्द दुनिया में ऐसे ही फैलेंगे, ऐसे ही जायँगे। 'सत्याग्रह' यह एक ऐसा शब्द है, जो मुझे अंग्रेजी, फ्रेंच और यूरोप की दूसरी भाषाओं की किताबों में देखने को मिला है। चीनी और जापानी किताबों में भी, जिनमें हिन्दुस्तानी बात हो, (ऐसी किताबें वे लोग मेरे पास भेजते हैं) मैंने 'सत्याग्रह' शब्द देखा है। इसलिए इन कौलों का तजुरमा करने की जरूरत नहीं है। इनके जो सही मानी हैं, उन्हें हम प्राप्त कर लें तो ये शब्द भी दुनिया में ऐसे ही पहुँचेंगे। इनके अनुवाद की जरूरत नहीं। हम इसे जिन्दगी में लाते हैं या नहीं, यही देखने की बात है।

'जय जगत्' का अर्थ

"जय-जगत्" का मानी यही है कि हम किसीसे डरेंगे नहीं और किसीको डरायेंगे नहीं। किसीसे दबेंगे नहीं और न

किसीको दबायेंगे ही। हम दब्बू नहीं है। यह है निडरता। यह निडरता हममें होनी चाहिए। दूसरी बात है, सब पर प्यार करना। सारी दुनिया में हमारे ही रिश्तेदार हैं, हमारे ही लोग हैं—यह भावना होनी चाहिए। कुल दुनिया में हमारे ही दोस्त फैले हैं, दोस्तों से दुनिया भरी है। इसमें कोई दुश्मन नहीं है। "ना कोई बैरी नाही बिगाना।" यहाँ यह बोलने का रिवाज है। कहते हैं—'यहाँ इस पहाड़ी पर हमारी फौज खड़ी है और उस बाजू दुश्मन है।' वहाँ भी, उधर भी इसी तरह बोलने का रिवाज होगा। लेकिन हमें यह सोचना चाहिए कि हम किसीके दुश्मन नहीं हैं। सब हमारे दोस्त हैं। हम ऐसी जिन्दगी बसर करें कि हमें किसीका डर न हो और न हम किसीको डरायें ही। यहाँ फौज खड़ी है और बच्चे खेल रहे हैं, किसी चीज का डर, खौफ नहीं है। लेकिन किसके बल पर? फौज के ही बल पर। लेकिन अगर कहीं यहाँ से फौज हट जाय या हार जाय तो? मान लो खत्म!

लड़ाइयों से देश के नसीब का निपटारा बेतुका

पलासी की लड़ाई में एक बाजू क्लाइव लड़ रहा था और दूसरी बाजू नवाब था। क्लाइव के पास थोड़ी सेना थी। लेकिन दोनों सेनाओं के बीच का फासला बहुत कम था याने दो फर्लांङ्ग भी नहीं था। दोनों फौजें आमने-सामने खड़ी थीं। दो-तीन घण्टे में वह लड़ाई खत्म हुई। नवाब की फौज हारी। उसकी फौज से बहुत सारे भाग निकले और थोड़े कट मरे। क्लाइव की फतह हुई। कुल बंगाल पर अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया। देखते-देखते सारा भारत अंग्रेजों के हाथ में आ गया। एक बाजू २५ हजार और दूसरी बाजू १० हजार। सारे मिलकर ३५ हजार थे और उन्होंने ३५ करोड़ के नसीब का फैसला कर दिया। अगर क्लाइव की हार होती तो अंग्रेजों के हाथ में हिन्दुस्तान न जाता। खैर! इस तरह सारे देश के नसीब के फैसले चंद घण्टों में, किसी एक मैदान पर, चंद लोग तय करें, यह कैसी बात है? इसके कारण लोग डरपोक बनते हैं, बुजदिल बनते हैं। यहाँ फौज बेकार खड़ी है, ऐसा मुझे नहीं कहना है। अपना काम वह करती है। लेकिन इन बच्चों को भी निडर बनना चाहिए। कोई हमला करने आये, स्टेनगन लेकर आये तो उसको कहना चाहिए "चलो देखें क्या चल रहा है, कौन आ रहा है?"

बहादुरी बनाम बुजदिली

सच्ची बहादुरी कौन सी है, यह हमें देखना चाहिए। डरकर भागनेवाले पर ही शेर हमला करता है और उसका मुकाबला करता है। मनुष्य की आँखों में वह देख लेता है। वहाँ उसे जरा भी डर नजर आया तो वह एकदम हमला करता है। आँखों में गुस्सा देखता है तो भी हमला करता है। लेकिन जब वह ऐसी आँखें देखता है, जिनमें न तो गुस्सा है और न डर, बल्कि बिलकुल शान्ति है तो वह हमला नहीं करता। ऐसे तजुरबे शिकार करनेवाले को आते हैं। शेर को आँखों की पहचान होती है। उसमें क्या चीज भरी है, बहादुरी है या बुजदिली, यह वह देख लेता है। इसलिए हमें सचमुच अंदर से बहादुर बनना चाहिए। जो शख्स शस्त्र के आधार पर बहादुर होता है, उसकी बहादुरी तब खत्म हो जाती है, जब कि वह अपने सामने ज्यादा मजबूत शस्त्र देखता है। बिल्ली चूहे के सामने शेर बनती है। चूहा उसके सामने काँपता है, भाग जाता है। बिल्ली आँखें फाड़कर नाखून वगैरह के कारण चूहे के सामने बहादुर बनती है। लेकिन जब उसके सामने कुत्ता आता है, तब वह डरपोक बन जाती है। क्या यही सच्ची बहादुरी है? वह एक जानवर है। कुत्ते के नाखून और दांत देखकर उसे अपने से ज्यादा कारगर और मजबूत समझकर वह डरपोक बनती है। चूहा तो छोटा सा जानवर है, इसलिए उसके सामने वह शेर बनती है।

जर्मन-सेना का उदाहरण

जर्मन लोगों ने लाखों की तादाद में दूसरे मुल्क पर हमला किया। एक-दो दिनों में दूसरे देशों पर टूट पड़े और तीन-चार दिनों में दूसरे देश पर कब्जा कर लिया। यह बहादुरी आपने सुन ली। अब उनकी बुजदिली भी सुन लीजिये। जब अमेरिका की सेना फ्रान्स के किनारे उतरी, तब जर्मनी ने देखा कि अमेरिका के पास बीस गुना ज्यादा हवाई जहाज और ज्यादा शस्त्रास्त्र हैं। यह सब लेकर अमेरिकी सेना फ्रान्स के किनारे उतरी है। तब जर्मनी ने समझ लिया कि अब अपनी कुछ न चलेगी। तुरंत हुकुम हुआ, फौज की शरण आओ। अखबारों में रोज आता था, "आज पाँच लाख जर्मन शरण आये।" "आज ३ लाख जर्मन-सेना ने शस्त्र नीचे रख दिये और शरण आये।" याने बहादुरों की बुजदिली जाहिर हुई। जो शख्स मजबूर थे, बुजदिल बने। क्योंकि हिसाब हुआ—सामने जो दुश्मन है, उसके पास बहुत बड़े खौफनाक शस्त्र हैं। इसलिए फिर उनके सामने शरण गये।

बहादुरी शस्त्रों पर निर्भर नहीं

इस तरह स्पष्ट है कि जो शस्त्र पर आधार रखती है, वह सच्ची बहादुरी नहीं है। जो समझेगा कि यह शरीर एक चोला है और इसे कोई मारेगा तो परवाह नहीं, वही सच्चा बहादुर होगा। ऐसी हिम्मत देश में कब आयेगी? जब हम सबको अपने दोस्त समझेंगे, किसीको भी दुश्मन नहीं समझेंगे। सब पर प्यार करेंगे। क्योंकि सामनेवाला दुश्मन बीच में, आपस में फूट डालता है। इसलिए पूरा प्रेम हो, आपस में मेल-जोल हो, कंधे से कंधा लगाकर काम करें। एक का सुख सबका सुख हो, एक का दुःख सबका दुःख हो। जब ऐसा समाज बनेगा और वह अन्दर से निर्भयता महसूस करेगा, शरीर को एक चोला समझेगा, तभी देश महफूज होगा। नहीं तो देश महफूज नहीं होगा।

अनुक्रम

१. तीन कर्तव्य : पक्षभेद-निरास, ग्राम संकल्प...
कटोदड़ा २८ सितंबर '५८ पृष्ठ ५३३
२. सच्ची बहादुरी किसमें?
नौशेरा २० जून '५९ " ५३९.

◆◆◆

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी